

21

वर्ष : 2017-18

ISSN : 0976-5778

ईसुरी

बुन्देली लोक संस्कार गीतों पर एकाग्र



विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली द्वारा नामित शोध पत्रिका- संख्या : 48672

ईसुरी-21

बुन्देली लोक संस्कार गीतों पर एकाग्र

वर्ष - 2018 ISSN : 0976-5778

प्रधान संपादक

आनन्दप्रकाश त्रिपाठी

लेखकीय प्रति

डॉ. लक्ष्मी पांडे जी

संपादक-सचिव, बुन्देली पीठ

राजेन्द्र यादव

1142 /

21/05/19

सहायक संपादक

विवेकानंद उपाध्याय

मनीष कुमार

प्रबंध संपादक

आशुतोष कुमार मिश्र

उप संपादक

हिमांशु कुमार

अवधेश कुमार



प्रकाशक

बुन्देली पीठ, हिन्दी विभाग
डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय,
सागर (म.प्र.)

7.	बुन्देली विवाह गीतों का लालित्य	- अभिनन्दन गोइल	97
8.	विवाह संस्कार के बुन्देली गीत (बन्ना-बन्नी)	- प्रदीप दुबे	99
9.	“गगर मोरी न डूबे रामा” संस्कार गीतों में संस्कृति	- लक्ष्मी पाण्डेय	105

कला एवं संगीत

1.	बुन्देलखण्ड की काव्य-संस्कृति और कथक	- शाम्भवी शुक्ला मिश्रा	114
2.	बुन्देलखण्ड के लोकनृत्य	- श्याम मनोहर मिश्रा	121
3.	बुन्देली लोक-संगीत	- पं. गुणसागर ‘सत्यार्थी’	127
4.	बुन्देली लोकगीतों में बसा नारी संसार	- दया दीक्षित	131

लोक, भाषा एवं संस्कृति

1.	बुन्देली लोकोक्ति एवं कहावत	- रमेश दत्त दुबे	138
2.	बुन्देली लोक समाज में ‘हरबोले’	- कन्हैया लाल ‘कलश’	146
3.	बुन्देली के प्रेमपरक गीत	- अतुल श्रीवास्तव	151
4.	बुन्देलखण्ड की किसान संस्कृति और संस्कार	- अवधेश कुमार	154

‘गगर मोरी न डूबे रामा’ संस्कार गीतों में संस्कृति

डॉ. लक्ष्मी पाण्डेय*

संस्कार गीत संस्कृति के रक्षक हैं। संस्कृति इन्हीं गीतों के माध्यम से सहजता से संरक्षित और हस्तांतरित होती है। यह संरक्षण और हस्तांतरण लोक के माध्यम से होता है इसलिए यह महत्वपूर्ण सूत्र है। लोकगीत, लोक साहित्य, लोकसंस्कृति, इनमें लोक की भूमिका साहित्य और संस्कृति को बाँधने वाले, समन्वय करने वाले की होती है। चूंकि संस्कृति और साहित्य लोकमंगल के लिए हैं अतः लोकानुभूति और लोकाभिव्यक्ति लोक द्वारा सहज ग्राह्य होती है। लोक का अपना दर्शन है, धर्म है, मूल्य है, विश्वास हैं जिसके आधार पर उसकी संस्कृति की पहचान बनती है जो मूलतः भारतीय संस्कृति का ही विकसित और विशिष्ट रूप होती है। लोक के आचरण, रीतियाँ, प्रथाएँ, उत्सव, क्रीड़ाएँ और व्यवहार आदि के द्वारा लोक संस्कृति प्रकट होती है। साहित्यकार लोकजीवन के विविध सांस्कृतिक दृश्यों को देखता, आत्मसात करता और अभिव्यक्त करता है- गद्य या पद्य के रूप में। गद्य का आरंभ तो बहुत बाद की घटना है किन्तु पद्य का आरंभ वैदिक काल से हो चुका था वैदिक ऋचाओं के गायन के साथ ही अतः लोक के संस्कार गीतों की यात्रा भी अति प्राचीन मानी जा सकती है। वैदिक काल से अब तक (अद्यतन) प्रकृति के उपादान लोक संस्कारों का लोकगीतों का अविभाज्य अंग रहे हैं। लोकसंस्कृति के

प्रचलित और परिवर्तित होते रूपों को लोकसाहित्य अभिव्यक्ति देता है। अतः लोकसाहित्य को लोक संस्कृति के तत्कालीन रूप से परिचय कराने वाला माध्यम माना जा सकता है। पं. माखनलाल चतुर्वेदी ने हरिद्वार हिन्दी साहित्य सम्मेलन में सभापति के पद से बोलते हुए कहा- “साहित्य में जहाँ स्वाद आता है और भाषा जहाँ अनेकार्थ वती होती है, वे स्थल हैं- मुहावरों, लोकोक्तियों, पहेलियों, कहावतों के उपयोग के। भारत में भाषा का यह वैभव हमें कदाचित् गावों ने अधिक दिया है। जहाँ जीवन था, वहीं तो साहित्य बनता।” (बुन्देली का फाग साहित्य- पृ.-20 डॉ. श्याम सुंदर बादल, वर्ष-2000) निश्चित रूप से जीवन का भारतीय सांस्कृतिक, धार्मिक, दार्शनिक रूप-सौंदर्य ग्राम्य गीतों, लोकगीतों में दिखाई देता है। ऐसे गीत जिनमें चारों पुरुषार्थ सिमट आते हैं। गीता का कर्मयोग, कबीर का निर्गुनिया भाव समाया होता है। आसक्ति, विरक्ति, शाश्वत-नश्वर के स्वर समाए होते हैं। बुन्देलखण्ड के निम्नलिखित लोक गीत के अप्रत्यक्ष भाव का सौंदर्य देखिए- अलगरजी भरे बेलाताल, गगर मोरी न डूबे रामा। सासू की डूबै, ननद की डूबै, मौरी रई उतराय, गगर मोरी...। देवरानी की डूबै, जेठानी की डूबै, मौरी रई उतराय, गगर मोरी...।।

*हिन्दी विभाग, डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) 470003